गोपीनाथ तिवाड़ी एम० ए०

विद्योदधि

गोपीनाथ तिवाड़ी एम० ए०

विद्योदधि

Published by

Makhan Lal Damani

Bikaner

Primed by

M. L. DAMANI

at

Chand Printing Press

Bikaner

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक मेरी कुछ कहानियों का संग्रह है। ये कहानियाँ ऐसी हैं जो विद्यार्थियों पर कोई कुत्सित शृंगारी प्रभाव नहीं डालतीं। मैं कहाँ तक इनमें सफल हुआ हूं, इसकी कसौटी जनता तथा विद्वान हैं।

लेखक

प्रभा-पुंज

लेखक

श्री गोपीनाथ तिवाड़ी, एम. ए. विद्योदधि

भूतों की डिबिया व वृक्षों की सभा के रचयिता

प्रकाशक

मक्खन लाल दम्माणी

बीकानेर

प्रथम बार
१०००

१९४२

।।।)

Published by

Makhan Lal Damani

Bikaner

Printed by

M. L. DAMANI

at

Chand Printing Press

Bikaner

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक मेरी कुछ कहानियों का संग्रह है। ये कहानियाँ ऐसी हैं जो विद्यार्थियों पर कोई कुत्सित शृंगारी प्रभाव नहीं डालतीं। मैं कहाँ तक इनमें सफल हुआ हूं, इसकी कसौटी जनता तथा विद्वान हैं।

लेखक

[पहली कथा]

पिता और पुत्र

विषय-सूची

विषय | | | पृष्ठ

[पहली कथा]
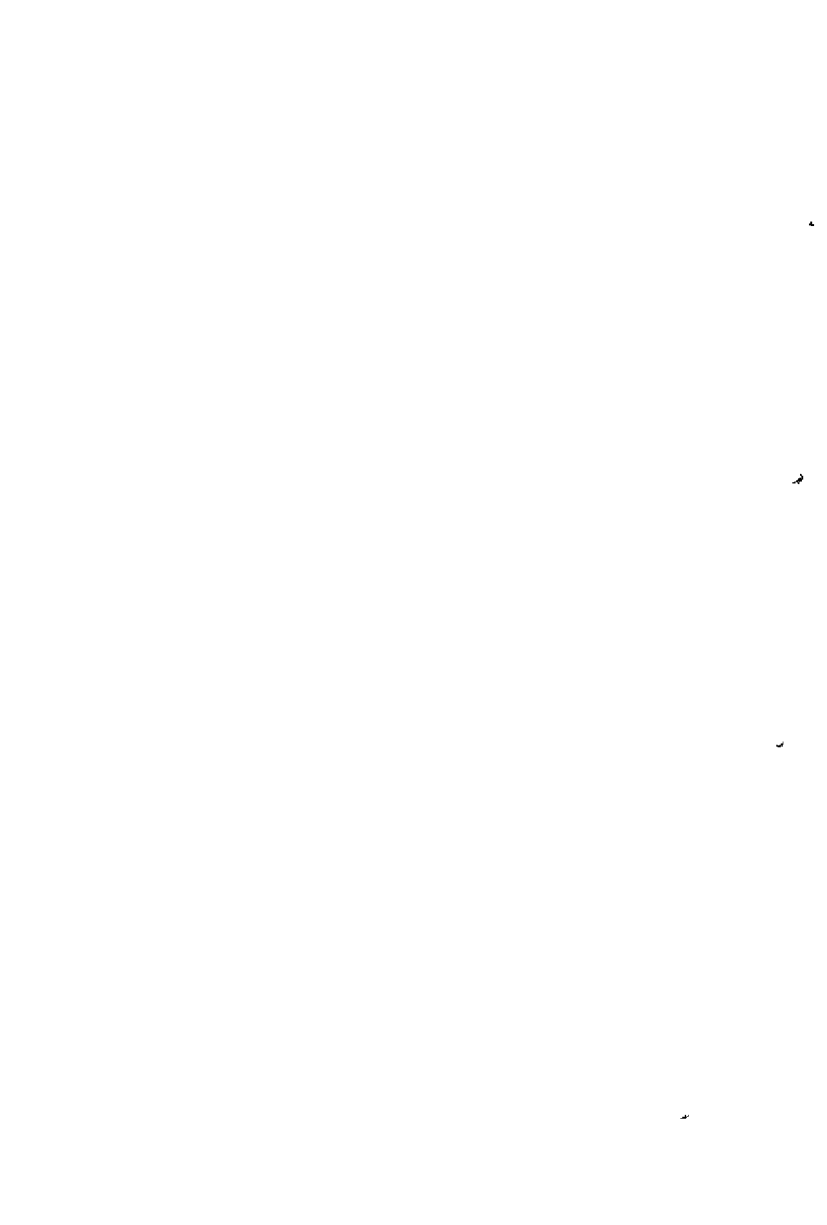
पिता और पुत्र

पिता और पुत्र

(१)

पुष्प और अक्षत भगवान पर चढ़ाये। फिर वह भग-वान के सामने घुटने टेक हाथ जोड़ प्रार्थना करने लगा। त्रिलोकी नाथ! दीनबन्धु!! ग़रीबों का कौन है? ले देकर मेरी धन दौलत तो हरिया है। और कुछ तो रक्खा क्या है? वही मेरे बुढ़ापे की लकड़ी है।

उसकी परीक्षा का फल आज आने वाला है। दीनानाथ! तू ही उसका बनाने वाला है। हरिया तेरा है। वह आगे पढ़ना चाहता है। पेट जून बाँध कर किसी तरह अब तक पढ़ाया है। अब तक तो यहाँ की ही पढ़ाई थी। फ़ीस माफ़ होगई थी। रूखा सूखा खाना खा लेता था, पढ़ने चला जाता था। पर आगे तो बाहर जाना होगा। अंग्रेजी की पढ़ाई ठहरी। पास फूटी कौड़ी भी नहीं।

मेरा हरिया दुखी होता है। मैं क्या करूँ...............

दीना की आँखों से आँसू गिरने लगे। बीच बीच में पुकार रहा था "कन्हय्या", "मुरलीधर"।

अचानक टूटे मकान का किवाड़ ज़ोरों से खुला। १६-१७ वर्ष का लड़का बेतहाशा दौड़ता आया। आते ही बोला-बाबा, बाबा! हरिया प्रथम श्रेणी में पास होगया है। कुल १० लड़के प्रथम श्रेणी में हैं। ८) महीना छात्रवृत्ति सरकार देगी। क्यों बाबा! अब पढ़ने भेजेगा न हरिया को।

दीना भगवान् के सामने लेट गया। न जाने मन ही मन क्या कहता रहा? इसी समय हरिया आया। एक सुशील कुमार। आते ही दोनों हाथ जोड़ प्रणाम किया। पिता के चरणों को छू कर पैरों की धूलि माथे में लगाई। दीना ने आशीर्वाद दिया। हरिया भी भगवान् के सामने ज़मीन पर लेट कर बोला "भगवन्! यह आपकी ही दया का फल है। अब तक निभाया है आगे भी आप ही निभायेंगे।"

(२)

सेठ रामदीन ने दक्षिणा का एक पैसा दिया। दीना के दूसरे हाथ में पेड़ों का दौना देखा। सेठजी बोले-महाराज! पेड़े खाये नहीं। हरिया के लिये रख लिये हैं? तुम्हें क्या हो

गया है ? लड़के सब के यहाँ हैं। प्यार भी सब करते हैं। पर तुम्हारी तो हालत ही और है। शरीर घुला रहे हो। ज़रा देखो तो। तुम्हारा हाल क्या है ? माँस कहीं दिखाई भी पड़ता है ?

दीना हँसता हँसता बोला— अब इस शरीर से कोल्हू थोड़े ही चलाना है ! मैं खाता भी बहुतेरा हूं। खाया पिया भी बहुत है।

सेठजी— बहुत ! शकल तो देखो। खाये पिये की ऐसी ही होती है ! मुझे मालूम नहीं क्या ? मुट्ठी भर चने खा कर दिन बिता देते हो। कहीं से सीधे में चून-दाल आती है तो उसमें से भी बेच देते हो। पैसे कर लेते हो। ठीक है न ?

दीना— सेठजी ! हरिया अंग्रेजी पढ़ रहा है। वह शहर में रहता है। शहर में खर्च बहुत होता है। निभा तो सब भगवान ही रहे हैं। भला हो स्कूल वालों का ! फ़ीस माफ़ कर दी है।

सेठजी— तो मिठाई भी वहाँ भेजी जायेगी ?

दीना— मैं बूढ़ा हूं। हजम नहीं होती। वहाँ ही भेज देता हूँ।

सेठजी— क्या अच्छा बहाना बनाया। यह क्यों नहीं कहते, 'खाता नहीं। हरिया के लिये तपस्या कर रहा हूँ'। ठीक

है। तुम यहाँ यह कर रहे हो। उधर तुम्हारा लाड़ला हरिया क्या कर रहा है, इसका भी पता है?

दीना— सेठजी! मेरा हरिया हजारों में एक है। आप तो खुद जानते हैं। मेरी कितनी सेवा करता था। बिना पूछे घर से बाहर क़दम न रखता था। तनिक जुकाम हुआ नहीं कि चार पाँच दिन खुद रोटी बनाता। शहर में और कौन दूसरा था जो सब को पैर छूकर प्रणाम करता था?

सेठजी— पर अब वे हरिश्चन्द्र शर्मा हो गये हैं, पहिले हरिया नहीं रहे। 'नमस्ते' ठोकते हैं। भंगी-चमारों में जा उन के साथ खाते हैं। अपने बाप दादों को मूर्ख बताते हैं कि उन्होंने श्राद्ध, मूर्ति-पूजा आदि जारी की। वे आर्य समाजी बन गये हैं।

दीना ने कानों पर हाथ धरकर कहा— राम! राम!! सेठजी, मेरा हरिया भंगी चमारों की छाँवली भी नहीं ले सकता। वह तो पास वाले मन्दिर में रोज़ आरती कराता था।

सेठजी— तो भई मैंने जैसा सुना कह दिया। मेरा लड़का भी तो उसी स्कूल में पढ़ता है। वह ही कह रहा था।

दीना को विश्वास न हुआ। वह फ़ौरन डाकखाने से एक लिफाफा लाया। उसने हरिया के लिये चिट्ठी लिखवाई—

विरामपुर।
१५-२-३६.

प्रिय पुत्र, चिरंजीव रहो।

बहुत दिनों से पत्र नहीं आया। मैं समझता हूं परीक्षा निकट है। उसकी तय्यारी में लगे होगे। पर तो भी थोड़ा समय निकाल पत्र लिख दिया करो। मेरी आँखें उधर ही लगी रहती हैं।

आज तुम्हारे विषय में कुछ सुना। मुझे विश्वास तो नहीं आया है। भगवान् करे झूंठ हो। बड़ा दुखी हो रहा हूँ। मैंने सुना है तुम भंगी-चमारों के साथ खाते हो? कितना पाप! इससे धर्म नष्ट होता है। बेटा! तुम ब्राह्मण हो। ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ हैं। वे ही ऐसे पतित हो जायेंगे तो दूसरों का क्या ठिकाना? और सुना है तुम मूर्ति पूजा का विरोध करते हो। बेटा, तुम तो रोज आरती कराने जाते थे। मेरे भगवान् को प्रति दिन सुबह उठते ही प्रणाम करते थे। उन्हीं की कृपा से तो यह सब कुछ हो रहा है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम इन कामों में नहीं हो। आगे भी नहीं पड़ोगे। तुम मेरे पुत्र हो। मेरे विचारों के विपरीत काम नहीं कर सकते। भगवान् तुम्हें परीक्षा में सफल करे।

तुम्हारा पिता—
दीना

उत्तर आया। बड़ी उत्सुकता से दीना ने लिफ़ाफ़ा खोला। जैसे कोई गरीब कहीं से आई पोटली को खोलता है। हरिया का पत्र था। उसने पढ़वायाः—

पूज्य पिताजी !

प्रणाम

आपका कृपा-पत्र मिला। पढ़ कर मुझे दुख हुआ। जो कुछ आपने सुना उसमें कुछ सत्यता अवश्य है। मैं अछूतोद्धार का काम करता हूं। हाँ, उनके साथ खाता पीता नहीं। उनके हाथ का अवश्य खा लेता हूं। उनमें हममें अन्तर क्या? दो हाथ शूद्र के हैं, दो ब्राह्मण के। सूर्य ब्राह्मण के घर धूप पहुँचाता है तो शूद्र को भी देता है। भगवान् की दृष्टि में दोनों एक हैं। न भगवान् ने जन्म के समय ब्राह्मण शिशु को जनेऊ पहिनाया न शूद्र के शरीर पर शूद्रता का चिन्ह दिया। इस छूत-छात के ही कारण तो हिन्दू जाति का पतन हो रहा है।

रही मूर्ति पूजा। आप खूब करिये। पर कृपया मुझे भी स्वतन्त्रता दीजिये। मेरा विश्वास नहीं जमता तो आप जबरदस्ती नहीं जमा सकते। मैं आरती करने जाता था। अब समझता हूँ मैं गलती पर था।

मैं आपका वही हरिया हूँ। हाथ जोड़ प्रार्थना है कि मेरी स्पष्टता के लिये क्षमा करना। आपने पत्र लिख कर मेरे

विचार जान लिये, अच्छा ही हुआ। बाद में स्वयं देखते तो चोट पहुँचती। इसीलिये मैंने भी बिना संकोच सब कुछ लिख दिया। मैं तो आपको भी समझाउँगा।

आशा है आप क्षमा करेंगे।

आपका आज्ञाकारी पुत्र-

हरिश्चन्द्र

बुड्ढा खड़ा का खड़ा रह गया। उसने कभी सोचा भी न था कि ऐसा उत्तर आवेगा। वह मन में कहने लगा-अंग्रेज़ी का असर है। थोड़े दिनों बाद यहाँ आवेगा। सब शहरीपन छूट जायेगा। फिर यही आरती के छुन्ने हाथ में होंगे। वहाँ लोगों ने बहका लिया है।

वह घर में आकर बैठ गया। इसी समय किसी ने बाहर से आवाज दी— 'पंडितजी'। दीना ने किवाड़ खोले। वह खड़ा होगया। बोला- 'अरे बाबूजी! आइये, आइये। क्यों इतनी तकलीफ़ उठाई? मैं खुद ही आ जाता' यह कह बैठने के लिये एक आसन डाल दिया।

बाबूजी बोले— मेरा ही आना उचित था। मैं काम से आया हूँ।

दीना ने आधीनता पूर्वक कहा— फ़रमाइये, क्या आज्ञा है?

बाबूजी- आपने मेरी लड़की तो देखी है?

दीना — हाँ बाबूजी! कमला बेटी के क्या कहने! बड़ी सीधी, बड़ी शर्मदार।

बाबूजी—मैं उसके लिये वर की खोज में हूँ।

दीना—होना ही चाहिये बाबूजी! पर बाबूजी! कमला बिटिया के लिये अच्छा वर खोजना। घर का अच्छा हो। पढ़ा-लिखा- सब तरह से योग्य हो। कमला बिटिया किस बात में कम है? गाना-बजाना, काढ़ना-बुनना; लिखना-पढ़ना, सब वह जानती है। अजी एक दिन की बात सुनाऊँ। मावस का दिन था। आपने सीधा देने के लिये बुलाया। मैं जैसे मकान के पास पहुँचा गाने की भनक कान में पड़ी। कमला बिटिया हारमोनियम पर गा रही थी। मुझे देख चुप होगई। कैसी शर्मालु है। तो आप शायद कहीं वर खोजने जा रहे हैं और मुझे भी साथ ले जाना चाहते हैं? मैं तैयार हूँ।

बाबूजी— नहीं, मैं जा कहीं नहीं रहा। यह बताइये लड़की आपको पसंद है न! आप तो अनेकों बार हमारे यहाँ गये हैं। उसे देखा भी है।

दीना—हां, सैकड़ों बार। कथा हो, श्राद्ध हो, ब्राह्मणों में मैं भी रहता हूँ। दान भी मुझे मिलता है।

बाबूजी—आपको पसंद है तो मैं आपके हरिश्चन्द्रजी के साथ उसका विवाह करना चाहता हूं।

दीना—बाबूजी! बाबूजी!! आप क्या बातें कर रहे हैं! कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली। मैं आपके योग्य नहीं। बैठने के लिये घर भी नहीं। कमला बिटिया के लिये कोई अच्छा घर खोजिये। कुछ चीज़ भी चढ़ सके।

बाबूजी—न मैं घर से शादी कर रहा हूँ न चीज़ों से। रही योग्यता। मेरी निगाहों में हरीशबाबू से अधिक योग्य वर जँचता नहीं। आप यह संबन्ध न करना चाहें तो आपकी मरज़ी।

दीना—मैं न करना चाहूं बाबूजी! मेरे ऐसे भाग्य कहाँ। मैं तो अपनी अवस्था देख ऐसा कहता हूँ। आप को अच्छे-अच्छे वर मिल सकते हैं। आप स्टेशन मास्टर हैं। लड़का आपका है।

बाबूजी—तो बस, हरीशबाबू से पूछ लीजिये।

दीना—नहीं, उससे पूछने की कोई ज़रूरत नहीं। मैं अपने हरिया को जानता हूं। वह मेरे कहने से बाहर नहीं।

बाबूजी—तब भी, आज कल का ज़माना और है।

दीना— आप विश्वास रक्खें।

स्टेशन मास्टर साहब ने उसी समय १०) और मिठाई

नारियल जो साथ लाये थे दे दिया। दीना ने नारियल को माथे से लगाया। स्टेशन मास्टर साहब ने छुटकारे की स्वाँस ली। आज उनकी आठों पहर की चिन्ता मिटी। लड़की खुद चिन्ता के सिवा है क्या ?

स्टेशन मास्टर साहब के जाने के बाद उसने रुपये, मिठाई और नारियल भगवान के सामने रख कहा—सब आप ही की दया है। नहीं तो मैं क्या इस योग्य था।

रात में दीना स्वप्न देख रहा था। हरिया टिकट चेकर हो गया है। मुफ्त वह हरिद्वार, द्वारका, रामेश्वर, प्रयागराज हो आया है।

(३)

परीक्षा समाप्त हो चुकी थी। दीना प्रतीक्षा कर रहा था, कब हरिया घर आवे। उसे विश्वास था कि परीक्षा समाप्त होते ही घर आजायेगा। गर्मियों में ज्येष्ठ या आषाढ़ में उसकी शादी कर दूंगा। ५ दिन बीत गये। हरिया न आया। पत्र भी लिखा पर उसका उत्तर भी नहीं मिला। ५ दिन और समाप्त होगये। दीना बेचैन हो उठा। दौड़ा दौड़ा सेठ रामदीन के यहाँ पहुंचा। सेठजी से पूछा—अब भी भगवान नहीं आया क्या ?

सेठजी ने उत्तर दिया—आज ही आया है। नन्दूसाल रुक गया था।

दीना आतुरता से बोला– ज़रा बुलाओ तो। हरिया के बारे में पूछूं।

सेठजी—थका माँदा सो रहा है। उठाना ठीक नहीं। फिर दूसरे समय आ जाना।

दीना—तो उसे जग जाने दो। मैं बैठा हूँ।

दीना एक तरफ़ बैठ कर प्रतीक्षा करने लगा।

अनेक आशंकाएँ उसके मन में उठने लगी। कहीं रुक गया क्या? पर रुकता कहाँ! उसका और है कौन? वहीं है, तो पत्र का उत्तर क्यों नहीं आया! इसी समय चलने का शब्द सुनाई दिया। दीना बड़ी उत्सुकता से उधर देखने लगा। नौकर था। मन में कह रहा था— ऐसा भी क्या सोना। सेठजी का खुद का काम होता तो मेरे हरिया को उसी समय जगवाते। मैं भी फ़ौरन जगा देना। ग़रीब तो ठहरा। ग़रीबी तो हर जगह साथ रहती है। किवाड़ खुले। दीना ने उधर देखा। पर कुत्ता था। समय काटे न कटता था। बड़ी कठिनता से दो घन्टे कटे। भगवानदीन आया। बूढ़ा झट पूछ बैठा—बेटा! मेरा हरिया कहाँ है?

भगवान— बाबा! मिठाई खिलाओ तो बताऊँ।

दीना— अरे बतायेगा भी! मिठाई भी खिला दूँगा।

भगवान— वह बहू लाने गया है।

दीना ने आश्चर्य से कहा— बहू लाने ! क्या कहते हो बेटा ! मेरी समझ में तुम्हारी बात नहीं आई ! क्यों हँसी उड़ाते हो !

भगवान— हँसी नहीं। तो सुनो। तुम्हारे भाग जग गये। मध्यप्रान्त में एक राय बहादुर पं० घनश्याम चरण जी हैं। बड़े भारी ज़मीदार हैं। छोटे-मोटे राजा। उनके एक भाई कमिश्नर हैं, दूसरे हाई कोर्ट के न्यायाधीश। वे स्कूल मे आये थे। कई लड़कों को देखा। हरिया पसन्द आ गया। हरिया के विचारों का ही लड़का ढूँढ रहे थे। शिक्षकों ने हरिया की प्रशंसा की। उन्होंने ही एक नौकर भेज हरिया को परीक्षा समाप्ति के दूसरे दिन बुलवा लिया।

भाग खुल गये, भाग। अकेली लड़की है। वे भी तुम्हारी ही जाति के हैं। गौड़ हैं पर गुर्जर गौड़।

दीना मौन भाव से सुन रहा था। उसका हृदय उथल-पुथल कर रहा था। वह इस सीमा तक सुनने के लिए तैयार होकर न आया था। वह दुखी मन से उठ खड़ा हुआ। वह सोच रहा था— क्या हरिया बिलकुल बदल गया है? क्या पढ़ लिख कर यही सीखा है?

दीना उदास रहने लगा। दूसरे दिन वह पूजा में लगा

था। उसी समय किवाड़ खुले। एक टोपधारी साहब खड़ा था। दीना डर गया। वह घबराता पूजा से उठ खड़ा हुआ। साहब ज़ोर से हँसा। उसने टोप उतारा। बोला—पिताजी अपने हरिया को भूल गये?

दीना—अरे हरिया! बेटा, यह स्वाँग कैसा।

हरिया ने कुलियों को आवाज़ दी। चार बड़े-बड़े सन्दूक और एक बड़ा-सा बिस्तरा घर के अन्दर रखवाया। वह जाकर कपड़े उतारने लगा। आज यह व्यवहार तो बिलकुल बदला हुआ है। न मेरे पैर छुए, न भगवान को प्रणाम, दीना मन में कह रहा था।

दोनों बैठे हुए थे। दीना बोला—बेटा! अब तुम काफ़ी पढ़ चुके हो। अब मेरी इच्छा पुत्र-वधू का मुँह देखने की है। मुझे भी दो रोटी का सुख होगा। तेरी माँ के मरने के बाद इन्हीं हाथों में चूल्हा रहा है। मैंने तुम्हारे लिये बड़ी अच्छी लड़की ढूँढ ली है। सुन्दर, पढ़ी लिखी, सब प्रकार से चतुर। लक्ष्मी है लक्ष्मी। उसके बाप बड़े आदमी हैं। स्टेशन मास्टर हैं। अपनी ही जाति के हैं। अपने ऊपर उनकी बड़ी कृपा भी है। घर में कुछ हो, कथा हो या श्राद्ध, मुझे अवश्य ब्राह्मणों में निमन्त्रण मिलता है।

हरिया हँस कर बोला—ब्राह्मणों को और चाहिए क्या? आप ही तो कहा करते थे, परशुराम ने २१ बार ब्राह्मणों को राज्य दिया। ब्राह्मणों ने क्षत्रियों को संभला दिया, एक शर्त पर। शर्त यही कि न्योता खिलाते रहें। जीमना तो ब्राह्मणों का धर्म है।

दीना—तू तो हँसी में बात उड़ाता है। मैंने लड़की खुद देख ली है। वे तुझे कहीं न कहीं रेल में लगवा भी देंगे। मैंने सब बातें पक्की कर ली हैं। वे १०) और नारियल दे भी गये हैं।

हरिया ने उद्विग्न हो कहा—दे भी गये हैं? बग़ैर मेरी रज़ामन्दी!

दीना—बेटा, ब्याह शादियों में मां बाप की रज़ामन्दी देखी जाती है। बेटा बेटी नहीं बोला करते। यह काम बड़े बूढ़ों का होता है। वे दुनिया की ऊँच नीच खूब देखे भाले हैं।

हरिया—पर पिताजी! विवाह वे अपना तो नहीं कर रहे। जिसका विवाह है, जिसके गले में यह फाँसी पड़ने वाली है उसकी सलाह भी तो लेनी चाहिये। जीवन तो लड़की को गुज़ारना पड़ेगा और विवाह करें मां बाप। वे देखेंगे धन, नाम और कुल। उन्हें क्या ग़रज़ यह देखने से कि वधू वर के योग्य है या नहीं।

दीना— तू पढ़ा लिखा है। मैं बहस तो कर नहीं सकता। पर विवाह मैंने निश्चय कर लिया है। कल ही बाबूजी मेरे पास आये। पूछते थे सगाई कब भेज दूं? मैंने कहा—हरिया जैसे ही आये शुभ दिन देख कर भेज दीजिये।

हरिया— किस की सगाई मँगा रहे हैं पिताजी?

दीना— तेरी।

हरिया— मेरी तो हो चुकी।

दीना को मालूम हुआ आस्मान टूट पड़ा हो। वह आतुरता से बोला— हो चुकी! कब? कैसे? कहाँ? वह भगवान् ने जो बात कही थी सच थी?

हरिया— हाँ, पिताजी।

दीना— मुझे तो कुछ खबर न दी।

हरिया— परीक्षा की तय्यारी में था। दूसरे डर था कि कहीं कोई बुरी भली लगा उतरवा न दे।

दीना— खैर, पर मैं कहे देता हूँ यह विवाह नहीं हो सकता। वे धनवान हैं तो अपने घर के। जाति में हम से हीन हैं। हम ठहरे आदि गौड़, वे शुक्कर गौड़। ऐसा भी कभी हो सकता है। मैं बाबूजी को जबान दे चुका हूँ।

हरिया—पिताजी, आप समझते नहीं। वे मुझे आगे पढ़ायेंगे। विलायत भेजेंगे। विवाह का सब खर्च देंगे। एक मोटर मिलेगी। मैंने अपनी सारी स्थिति उनके सामने रख दी है। हमारा एक पैसा भी खर्च न होगा। देखिये सगाई में क्या क्या दिया है?

यह कह उसने सन्दूकों में से सामान निकाला। एक कलई की परात, चाँदी की झारी, थाली, गिलास, कटोरियाँ, चम्मच, सोने का तोड़ा, घड़ी, बहुत से गर्म तथा ठंडे कपड़े, और ५०१) रु० नकद।

हीरा देख कर चौंधिया गया। किसी बड़े से बड़े बनिये के यहाँ भी कभी इतना सामान न आया था। एक बार तो मन के एक कोने ने कहा—बाबू साहब, क्या दे सकेंगे इसके सामने? बड़ा घराना है। पर दूसरे ही क्षण ध्यान हो आया—मैं जबान दे चुका हूं। सारी बिरादरी को पता पड़ गया है। बस पर वे गुज्जर गोड़। सगाई आने वाली है।

अतः वह दृढ़ता से बोला—कुछ भी क्यों न दिया हो, मैं सगाई स्टेशन मास्टर साहब की ही लूंगा। नहीं तो मेरी भद्द होगी। मैं उन्हें मुँह कैसे दिखाऊँगा?

हरिया— पिताजी क्षमा करना । आप वचन दे चुके हैं तो मैं भी दे चुका हूँ । मैं शादी नहीं करूँगा ।

होना— बेटा, मैंने लड़की देखी है । ऐसी लड़की न मिलेगी ।

हरिया— मैं भी तो देख आया हूँ । वैसी भी.........

होना बात काट कर बोला— देख आया ! यह अधर्म ! हरिया मैं कहे देता हूं यह शादी न हो सकेगी । हे भगवन् ! घोर कलियुग है । लड़का खुद लड़की देखे । वे भी कैसे नीच हैं जिन्होंने लड़की दिखा दी ।

हरिया का मुँह लाल हो गया । वह क्रोध दबाता बोला— पिताजी, अब जमाना बदल गया है । मैं अपनी भलाई बुराई समझता हूँ । मैं विवाह नहीं करूँगा । आप अधिक दिक करेंगे तो घर छोड़ भाग जाऊँगा । आपको बाबू साहब का बड़ा ख़याल है तो आप अपनी शादी.......... ।

कुछ सोच हरिया रुक गया । तीर निकल चुका था । शब्द बाण से अधिक चोट करता है । होना के हृदय पर आघात लगा । वह वहाँ से हट गया । भगवान् की मूर्ति के सामने जा मग्न हो मन रोकर कहने लगा— भगवन् ! मेरे किस पाप का यह बदला है । यही वह हरिया है, जो मेरे शब्दों को वेद वाक्य

मानता था। आज मेरा सामना करता है। कहनी, न कहनी सब कहता है। इसकी बुद्धि को क्या हो गया है? प्रभु! इसको सुबुद्धि दो।

शाम हुई, हरिया ने रोटी न खाई। बहुत कुछ वृद्ध बाप ने निहोरे किये पर वह टस से मस न हुआ। दीना को भी क्रोध आगया। वह भी भूखा ही सो रहा। दूसरे दिन दोपहर को फिर हरिया ने न खाया। पिता की आत्मा ठहरी। वह बोला— अच्छा बेटा! जहाँ तेरी इच्छा हो विवाह कर! चल खाना तो खाले। उड़द चावल बनाये हैं। चने की रोटियाँ ठंडी अच्छी नहीं लगतीं। मुझे तो डर हो रहा है बाबूजी का। कैसे उन्हें मुख दिखाउंगा?

हरिया का मुख कमल खिल उठा। तीर निशाने पर पड़ा। वह हंसता बोला— आप बाबूजी की चिन्ता न करें। मैं उनसे समझ लूंगा। वे आप तक आयेंगे ही नहीं।

(४)

दीना का मकान अब पक्का है। विवाह के दिनों में ही पक्का हो गया था। आज कई आदमी घेरे बैठे हैं।

पंडित ज्ञानराज बोले— दीना भइया! मैं तो कहूंगा हमारा हरिया बेटा तुम से अधिक समझदार है। यदि वह तुम्हारी बात मान लेता और उन बाबू जी के यहाँ विवाह कर लेता तो यह दिन देखने में कैसे आता!

वीना- पर भइया, मुझे क्या लाभ हुआ ? मेरा दुख कहाँ घटा ? आज शादी हुए ५ साल से अधिक होगये हैं। बहूरानी बस एक बार विवाह के बाद ही यहां आई थी। रहे हमारे बाबू साहब। उन्होंने तो केंचुली ही उतार दी है। दो साल कालेज में पढ़े। एक दो दिन के लिये मेहमान की भाँति यहां आते। बड़ी कठिनता से एक हफ्ते रुकते। खाते-पीते, उठते, बैठते माथे में सलवटें पड़ी रहतीं। अब दो साल से विलायत थे। कभी तीन-चार महीने में एकाध चिट्ठी आगई तो आगई।

ज्ञानरोज- इन बातों में क्या रक्खा है! तुम पुराने हो पुराने। जमाना बदल गया है। आज कल के लड़कों की बात ही निराली है। पर तुम्हें तो अपने भाग्य को सराहना चाहिये। रिश्ता इतनी बड़ी जगह हुआ। दो साल से १०) महीना तो वे ही तुम्हारे पास भेज रहे हैं। दो साल में लगभग २५०) तो आ ही गया है। हां, यह तो बताओ हरिया भइया कब यहाँ आ रहा है ?

श्यामलाल ने दाढ़ी हिलाते कहा- पर उसे तो यहाँ आते डर लग रहा होगा ? सोचता होगा जाति वाले अंधड़ मचायेंगे।

श्यामलाल- डर काहेका ? भइया, विदेश यात्रा पाप जरूर

है। पर प्रत्येक पाप के लिये शास्त्र ने प्रायश्चित्त भी तो रख दिया है। वह भी प्रायश्चित्त कर लेगा।

ज्ञानराज– हाँ, हाँ, भाइयों को जिमा देगा। हरिद्वार गङ्गा-स्नान कर आयेगा। गोमूत्र पी लेगा। बस शुद्ध हुआ।

श्यामलाल — और क्या? ज्ञानराजजी मुझ से कोतवाल साहब कह रहे थे कि हरिया भइया आते ही कलक्टर बन जायँगे। वह वहां कलक्टरी के इम्तहान में अव्वल पास हुआ है।

ज्ञानराज— हां, हां, आई० सी० एस० की परीक्षा में। दीना भइया! वह यहां कब आयेगा?

दीना— क्या जानूं भइया! पत्र में तो २२ ता० को बंबई पहुँचने को लिखा है। आज २२ ता० ही है।

पास वाले मन्दिर की शंखध्वनि से सभा भंग होगई। आरती का समय हो गया था।

समय नदी की धारा के समान आगे बहता ही रहता है। किसी की अपेक्षा नहीं करता। क्षण-क्षण में रूप बदल भाग जाता है।

दीना के हृदय में प्रातःकाल आशा का प्रकाश आता,

पर ११ बजे रात को निराशा के अंधकार के साथ तख़्त पर पड़ रहता। एक माह बाद एक पत्र और ५०) का मनिआर्डर मिला। पत्र पढ़वाया। लिखा था—

पूज्य पिताजी !

मैं सकुशल रायपुर पहुँच गया हूं। आपको सुनकर प्रसन्नता होगी मैं मेरठ ज़िले में कलक्टर बना कर भेजा जाऊँगा। मैं वहाँ आ नहीं सकता। यहाँ किसी की राय नहीं कि मैं वहाँ आऊँ। अत. ५०) भेज रहा हूँ। २०) से अच्छे कपड़े बनवा लीजियेगा। ३०) सफर खर्च के लिये हैं।

यहाँ आकर मुझे पता चला कि ससुरजी मेरे पीछे १०) मासिक आपको देते रहे। न आपने लिखा, न ससुरजी ने। आपको इनका कृतज्ञ होना चाहिये और आने में आना कानी न करनी चाहिये।

आपका—

हरिश्चन्द्र शर्मा

दोना के हृदय में तूफान उठ खड़ा हुआ। उसे क्रोध था, और था दुख। दूसरे क्षण उसकी आँखों के कोनों में दो बूंदों ने अड्डा जमा लिया। घर आ उसने ज़मीन खोद एक लुटिया में से रुपये निकाले और ३००) रु० वापिस रायपुर भेज दिये।

मनिआर्डर के फारम पर लिखवा दिया- रुपयों का ताना है। वापिस भेजता हूं। तुम खुश रहो । यहाँ नहीं आओगे तो मैं मर नहीं जाऊँगा।

(५)

"मामा, मामा" बाहर से आवाज दी। दीना बाहर आया। उसने देखा कि उसका भानजा महादेव है। १५ वर्ष से उसका मुख भी दिखाई न पड़ा था। १५ वर्ष हुए दीना की बहिन दरिद्रता से सदा के लिये नाता तोड़ गई थी। उसके बाद भानजे शाह ने दीना से कोई सम्बन्ध न रक्खा। कारण यह था कि वह महादेव की शादी में भात न दे सका था। महादेव एक सेठ के यहाँ मुनीम बन गया था। २५) माहवार मिलते थे। बड़ा आदमी हो गया था। वह गरीब मामा की क्यों चिन्ता करता? पर आज अचानक क्या काम अटक पड़ा? दीना यही सोचता बोला—'आओ बेटा! घर में चलो'

बैठते ही महादेव बोला—मामा! सोचते होगे, आज कैसे आगये। दुख में अपना ही याद आता है। मेरी ही गलती थी मैं इतने दिनों न आया। फुरसत भी न मिलती थी।

दीना—कहो, कहो, कैसे आये?

महादेव—क्या बताऊँ मामा, मेरे सेठ और एक दूसरे

दूकानदार में बड़ी शत्रुता चली आती थी। एक दिन दोनों दलों में चल गई। लाठियों तक की नौबत आगई। दूसरे दल के बहुत चोट आई। उसने हम पर फौजदारी का मुकद्दमा चला दिया। डिप्टी साहब की अदालत में हम हार गये। कई आदमियों को कैद की सज़ा सुनाई गई। सेठजी को भी ६ महीने की, मुझे ३ महीने की।

हमने कलक्टर साहब के यहाँ अपील की है। यहाँ पता चला कि कलक्टर तो हमारे हरिया भइया हैं।

दीना चुप रहा। उधर से कोई उत्तर न पा महादेव ने फिर कहना आरम्भ किया— मैं हरिया भइया के घर गया। पर मामा! हरिया भइया तो बड़े बेमुरौव्वत निकले। मैंने कहला कर भेजा कि मैं मिलना चाहता हूं। आपका फुफेरा भाई हूँ। अन्दर से ही काम पुछवाया। मैंने कहला दिया कि एक दुख में पड़ा हूँ। आपसे दुखड़ा सुनाना है। उन्होंने कहला भेजा—फुर्सत नहीं। जो कुछ कहना है लिख कर दफ्तर में दो।

अब मामा! तुम्हारे पास आया हूँ। तुम जा कर भइया से सिफ़ारिश कर दो।

दीना बोला— बेटा! तू उसका बर्ताव देख चुका है। मेरे साथ भी अच्छा नहीं। यह कह उसने सारी कथा कह सुनाई।

सुन कर महादेव बोला— तो भी मामा, तुम बाप हो। बाप और बेटा दो नहीं। ख़याल आवेगा ही। मुझे बचाओ, नहीं तो बरबाद हो जाऊँगा।

दीना ने बहुत समझाया पर महादेव अड़ गया। रोने लगा। पैर पकड़ लिये। धरना दे दिया। आख़िरकार दीना को जाना पड़ा। दीना मेरठ पहुँचा। पूछते पूछते वह कलक्टर साहब के बंगले तक पहुँच गया। दरबान दरवाज़े पर था। उससे पूछा— भइया, कलक्टर साहब यहीं रहते हैं क्या? मैं उनसे मिलना चाहता हूं। दरबान ने सिर से पैर तक उसे देखा और बोला— गधा और मन्दिर में जावे। जा, भाग जा गँवार। बड़ा मिलने वाला आया।

दीना— भइया तू उनसे जाकर कह दे कि तुम्हारा बूढ़ा बाप आया है।

'बाप' शब्द ने बिजली का काम किया। वह खड़ा हो बोला— आप कहाँ से आते हैं? साहब ने तो कहा ही न था कि आप आयेंगे। स्टेशन पर ही मोटर भेज दी जाती।

दीना— मैंने ख़बर न दी थी। मैं विरामपुर से आ रहा हूँ।

दरबान मन में सोचने लगा— विरामपुर ही के साहब

रहने वाले हैं। हो सकता है बाप ही हो। पर उन्होंने कभी इनका ज़िकर भी नहीं किया। तो भी, बड़े आदमियों की बड़ी बातें होती हैं। इन्हें दुत्कार दूँ तो भी आफत में पड़ सकता हूं। बैंच पर बैठा हूँ। क्या बिगड़ेगा।

वह बोला— बाबा! कलक्टर साहब तो एक जलसे में गये हैं। वे कमिश्नर बन गये हैं। इसी की खुशी में बड़ा भारी जलसा है। बड़े बड़े सेठ और दुकान वहाँ आयेंगे। आप अन्दर बाग में बैंच पड़ी है उस पर बैठ जाइये। वहाँ एक मुसलमान बैठा था। वह नोकर मालूम होता था। बैठ कर दीना ने उससे पूछा— भइया, कलक्टर साहब के कै बच्चे हैं?

वही मुसलमान — दो लड़के।

दीना— भला, साहब पूजा ऊजा भी करते हैं?

वही मुसलमान— मैंने तो कभी करते नहीं देखा।

दीना— खाना तो बहूरानी बनाती होंगी?

वही मुसलमान— नहीं, मैं बनाता हूँ।

दीना चौंक कर खड़ा हो गया "कौन! तुम! मुसलमान!" हरे राम! तब तो हरिया मुसलमान हो गया। मैं यहाँ कभी भी न ठहरूँगा। सोचा था कुछ दिन रुक जाउँगा।

दीना ने दरबान से जाकर कहा— मुझे जलसे में ही भिजवा दो।

दरबान ने एक नौकर को साथ कर दिया। वहाँ पहुँचे। एक बड़ा भारी बाग़ था। दरवाज़े लकड़ी और फूलों के बनाये गये थे। मोटरें ही मोटरें थीं। दरवाज़े पर एक सिपाही ने रोका पर नौकर ने कुछ कहा। उसने दोनों को जाने दिया।

खाना शुरू ही होने वाला था। एक सेठजी बोल रहे थे। उसी समय नौकर के साथ दीना वहाँ जा पहुँचा। सिर पर मैला पग्गड़। फटा कुर्त्ता। पैरों में सेर भर धूल, हाथ में लट्ठ। सब आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगे। कलक्टर साहब ने डाँट कर नौकर से कहा— क्यों बे नत्थू! यह कौन है? यहाँ कैसे आया?

दीना अब निकट पहुँच गया था। वह बोला— मैं हूं दीना।

कलक्टर साहब का चेहरा फक हो गया। उन्होंने मुँह नीचे झुका लिया। सब बैठे हुए महानुभाव एक टक दीना की ओर देख रहे थे। कलक्टर साहब के पास बैठी कमिश्नर साहब की स्त्री ने कहा— यह कौन है मिस्टर शर्मा? इस जंगली को मज़ा किरकरा करने किसने आने दिया?

कलक्टर साहब ने कुछ क्षण सोचा। फिर झट सिर ऊपर उठा बोले— मैं तो नहीं जानता । कोई है, इसे निकालो यहाँ से ।

नौकर जो साथ आया था थर थर काँपने लगा। एक सिपाही ने आ दीना को बाहर की ओर धक्का दिया। दीना बोला— हरिया! अपने बाप को भी भूल गया? अच्छा होता तू पैदा ही न होता। आज से मैं समझूँगा मेरे बेटा ही नहीं है, मैं निपुत्रा हूँ।

सिपाही ने एक सुन्दर रसीद कर कहा— क्या बक रहा है पागल ।

(६)

एक ने कहा— दीना भाई! तार भिजवादूं क्या?

दीना ने खाँसते उत्तर दिया— नहीं मेरी सौगन्ध है भइया! मैं उसका मुख नहीं देखना चाहता। मेरे तो तुम ही लोग हो।

वही आदमी— तो भी भइया! ऐसे वक्त में उसका आना ही अच्छा है।

दीना-- नहीं भइया, उसका नाम भी न लो। मुझे दुख होता है।

दीना ने दरबान से जाकर कहा—मुझे जलसे में ही भिजवा दो।

दरबान ने एक नौकर को साथ कर दिया। वहाँ पहुँचे। एक बड़ा भारी बाग़ था। दरवाज़े लकड़ी और फूलों के बनाये गये थे। मोटरें ही मोटरें थीं। दरवाज़े पर एक सिपाही ने रोका पर नौकर ने कुछ कहा। उसने दोनों को जाने दिया।

खाना शुरू ही होने वाला था। एक सेठजी बोल रहे थे। उसी समय नौकर के साथ दीना वहाँ जा पहुँचा। सिर पर मैला पग्गड़। फटा कुर्त्ता। पैरों में सेर भर धूल, हाथ में लट्ठ। सब आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगे। कलक्टर साहब ने डाट कर नौकर से कहा—क्यों बे नत्थू! यह कौन है? यहाँ कैसे आया?

दीना अब निकट पहुँच गया था। वह बोला—मैं हूं दीना।

कलक्टर साहब का चेहरा फक हो गया। उन्होंने मुँह नीचे झुका लिया। सब बैठे हुए महानुभाव एक टक दीना की ओर देख रहे थे। कलक्टर साहब के पास बैठी कमिश्नर साहब की स्त्री ने कहा—यह कौन है मिस्टर शर्मा? इस जंगली को मज़ा किरकरा करने किसने आने दिया?

कलक्टर साहब ने कुछ क्षण सोचा। फिर झट सिर ऊपर उठा बोले—मैं तो नहीं जानता। कोई है, इसे निकालो यहाँ से।

नौकर जो साथ आया था थर थर काँपने लगा। एक सिपाही ने आ दीना को बाहर की ओर धक्का दिया। दीना बोला—हरिया! अपने बाप को भी भूल गया? अच्छा होता तू पैदा ही न होता। आज से मैं समझूँगा मेरे बेटा ही नहीं है, मैं निपुत्रा हूँ।

सिपाही ने एक हन्टर रसीद कर कहा—क्या बक रहा है पागल।

(६)

एक ने कहा—दीना भाई! तार भिजवादूँ क्या?

दीना ने खाँसते उत्तर दिया—नहीं मेरी सौगन्ध है भइया! मैं उसका मुख नहीं देखना चाहता। मेरे तो तुम ही लोग हो।

वही आदमी—तो भी भइया! ऐसे वक्त में उसका आना ही अच्छा है।

दीना—नहीं भइया, उसका नाम भी न लो। मुझे दुख होता है।

दीना रोने लगा। उसे खाँसी का धसका उठने लगा। बलगम बढ़ गया। हकीमजी ने नब्ज देखी और बोले—केवल गंगा जल और तुलसी दो। धीरे से उन्होंने पास बैठे एक आदमी से धीरे से पूछा— तार तो दे दिया गया था।

वह बोला— हाँ, हकीमजी। पर पता नहीं वह आये भी या नहीं। इसे देखो। इसने उस कपूत के लिये क्या क्या नहीं किया। आप भूखा रहा पर उसे खिलाया।

पास बैठा दूसरा पड़ोसी बोला—आजकल की तालीम है। लड़कों का दिमाग ही फिर जाता है।

दीना बड़ बड़ाने लगा— हाँ चलूंगा। ले चलो मुझको। मेरा यहाँ कौन है? हरिया— नहीं नहीं वह मेरा नहीं।

इसी समय किवाड़ खुले। टोप पहिने हरिया खड़ा था। उसके पीछे एक स्त्री गोद में बच्चा लिये। हरिया चिल्लाया— पिता जी! पिता जी!

दीना बैठा होगया और जोर से बोला— कौन! हरिया! पर नहीं, तू यहाँ से चला जा। मेरा कोई नहीं। यहाँ आया क्यों? मैं जा रहा हूँ, पर तू मुझे हाथ न लगाना। मैं सौगन्ध दिलाये देता हूँ।

हरिया ने छोटे बच्चे को पिता की गोद में डाल दिया। वह बच्चे को पुचकारता धीरे से बोला— जीते रहो बेटा! खुशी रहो।

यह कह दीना ने उसे छाती से चिपका लिया। वह रो रहा था। सब रो रहे थे। बच्चा चिल्ला पड़ा। दीना ने उसे वापिस दे कहा— हरिया! तू खुश रह। दूधो नहाओ, पूतो फलो। राम.........राम.........

हरिया खड़ा रो रहा था। मृत पिता को देख वह मन ही मन सोच रहा था— ये हैं पिता और मैं पुत्र!

उर्दू में प्रकाशित पुस्तकें

कौसर

मुन्शी गौरीशंकर लाल, "अख्तर", की अमर का चमत्कार, जो साहित्य में तहलका मचा रही है।

आबशार

मुन्शी जी का दूसरा अछूता नमूना, जिसको उर्दू स वर्षों से प्रतीक्षा कर रहा था। मोटा कागज़; बढ़िया छ

सरमाया

मुन्शी जी की तीसरी कला-कृति जो व्यथित हृदय नैसर्गिक सुख और शान्ति की अनुभूति कराने वाली है

उर्दू में शीघ्र प्रकाशित होंगी

(१) "आशनाइये मासूम"—(एक अँग्रेजी उप का भावपूर्ण अनुवाद) अनुवादक, श्रीयुत एम० एल० प

(२) "गुल्दस्तए जज़्बात" —मुंशी जी की दूसरी कृ जिसके एक एक शब्द आपकी भावनाओं में जागृति संचार कर देंगे।

(३) "पुर इसरार वसीयत"—रहस्य पूर्ण रोमां ओत प्रोत, प्रेम की मधुर स्मृति और छिपे हुए खज़ा भेद आप पढ़ कर चकित रह जायँगे।

[दूसरी प्रभा]

दो रूप

दो रूप

(१)

कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। माघ का महीना तो ठहरा। तिस पर ये काली काली घटाएँ जो क़यामत न ढाएँ, थोड़ी। अभी रात के ७॥ ही बजे थे पर सड़क लगभग सुनसान सी ही थी। इक्का दुक्का कामकाजी आदमी या दो चार इक्का मोटर, बस इनके ही दर्शन होते थे।

एक मोटर हलवाई की दूकान के सामने रुकी। रायसाहब अमीरचन्द उतर कर सब से नामी हलवाई की दूकान पर पहुँचे। हलवाई से बोले—दस रुपये की बढ़िया मिठाई तोल कर मोटर में भिजवा दो। महफ़िल जमेगी। दो चार यार दोस्त आयेंगे। उनके स्वागत के लिये कुछ न कुछ तो होना ही चाहिये।

रायसाहब मोटर में जा बैठे। इसी समय एक लड़का ठिठुरता मोटर के पास आया। बदन पर कुछ चिथड़े थे। माँस को तो मानो वह कहीं उधार रख आया था। दाँत कट-

कटा रहे थे। उसने हाथ आगे बढ़ा गिड़गिड़ाते कहा– सेठजी बड़ा भूखा हूँ। कुछ दया हो जावे।

सेठजी— इन भिखमंगों के मारे तो रास्ता चलना दूभर है। जा जा, भाग यहाँ से।

लड़का— सच कहता हूँ सेठजी! दिन भर का भूखा हूँ। मक्खी तक मुँह में नहीं गई है।

यह कह कर उसने पेट पर के चिथड़े ऊपर उठाये। पेट पटका कमर से लगा था। लड़के ने पेट बजाया। सेठजी बोले— वाह भई वाह! भिखमंगे भी सर्व गुण सम्पन्न हैं। अन्धे बन जायँ, कोढ़ी दिखाई दें। इस लड़के को देखो, पेट कैसा पिचकाया है? मालूम होता है, कई दिनों का भूखा है। लड़का रोने लगता है और कहता है— सेठजी सच मानिये।

सेठजी— जा भई जा, हरिश्चन्द्र का अवतार तो तू ही है। पर मेरी जान क्यों खाता है?

इसी समय मिठाई का पिटारा हलवाई ने ड्राइवर के पास रक्खा। लड़का आशा बाँध पहिये के ऊपर चढ़ कहने लगा– सेठजी! बड़ा पुण्य होगा। थोड़े चने ही दिला दीजिये।

सेठजी — अच्छा ले, यह कह कर सेठजी ने बेंत का वार

किया। इसी समय ड्राइवर ने मोटर चला दी। लड़का 'हाय' कह गिर पड़ा। मोटर मुड़ी। ड्राइवर बोला— वह नीचे तो नहीं आ गया।

सेठजी— चलो। देर हो रही है। आया होगा।

इतने बड़े शहर में हजारों आदमी रहते हैं। सेठजी किस किस की चिन्ता करें। एक क्षण को ध्यान आया, वह पहिये के पास गिरा था। मन ने दूसरी तरफ से उत्तर दिया—गलती भी तो इसी की है! क्यों वह चलती मोटर पर चढ़ा।

मोटर कोठी पर आकर रुकी। दरबान ने दरवाजा खोला। रायसाहब आराम कुर्सी पर बैठ गये। रमा ने आकर कहा— वह दर्जन की लड़की कुर्तें सिल कर लाई है। रायसाहब— अच्छे सिये हैं ना?

रमा— हाँ, बहुत अच्छे। ऐसे आपके नामी दरजी ने भी नहीं सिये थे। दर्जन की लड़की कमरे में आई। दोनों मुट्ठियाँ पेट से लगी हुई थी। जाड़े में सिकुड़ रही थी। उसने चारों कुर्तें रायसाहब के हाथ में दे दिये। रायसाहब ने देख कर नाक सिकोड़ी, भौं चढ़ाई और बोले— कैसे खराब सिये हैं। फिर जोर से बोले— बेटी मुन्नी! ओ बेटी मुन्नी! इसे बारह आने पैसे दे दे।

लड़की घबड़ा कर बोली—सेठजी! डेढ़ रुपया ठहरा था। हाथ की सिलाई है। हम माँ बेटियों ने केवल मुट्ठी भर नाज खा रात-दिन काम कर तीन दिन में तय्यार किये हैं। बारह आने तो हमें कोठरी का किराया ही देना है।

राय साहब—देना है तो मैं क्या करूँ। मेरा डेढ़ रुपये गज का कपड़ा बिगाड़ दिया। डेढ़ रुपये की सिलाई होती तो डेढ़ रुपया ही देता। इसी समय एक छोटी लड़की ने घर में से बारह आने लाकर दिया। दर्जन की लड़की ने गिने—बारह आने थे। वह गिड़गिड़ा कर बोली—सेठजी आठ आने तो और दिला दो। हम माँ बेटी दो दिनों की भूखी हैं। आपकी जान को दुआ देंगी।

सेठजी—पैसा मुफ्त नहीं आता। लाख खून का काला खून करना पड़ता है। इस तरह लुटाऊँ तो दो दिन में कंगाल हो जाऊँ।

लड़की—सेठजी! आपके लिये ८ आने कोई बात नहीं, पर हमारे प्राण बच..........।

सेठजी—जा जा, क्यों मेरी जान खाए जाती है। जा, अदालत में मेरे खिलाफ़ दावा कर दे।

वह उठे और दरबान को बुला कहा—इसको बाहर निकाल

दे। लड़की खुद चल दी। हाड़ कंपाने वाला जाड़ा था। हवा बर्छी सी लगती थी। पैरों का खून जमा जाता था। पर लड़की को इन का ध्यान न था। वह सोच रही थी- मालकिन आई होगी। एक महीना पूरा हो गया है। मेरे जाते ही सिंहनी की भाँति खाने को दौड़ेगी। बारह आने तो वही ले लेगी। हम खायेंगे क्या?

उसकी दोनों आँखें टपाटप बरस रही थी। वह कह रही थी— हम गरीबों से मौत भी तो डरती है कि कहीं कुछ माँग न बैठे।

राय साहब लेटे थे। कारिन्दा आकर बोला— हुज़ूर! रेडियो की मशीन आ गई है। मैंने तीन मशीनें देखी थीं। एक दो सौ की, दूसरी पाँच सौ की, तीसरी सात सौ की। दो सौ वाली जँची नहीं। मैंने सोचा— राय साहब के घर दो सौ वाली क्या शोभा देगी। पाँच सौ और सात सौ वाली दोनों लगभग एक सी थी। अतः पाँच सौ वाली ख़रीद लाया हूँ।

राय साहब तड़क कर बोले— मुन्शी जी, न जाने भगवान् आप को कब बुद्धि देगा? पता है, जितना गुड़ डालेंगे उतना ही मीठा होगा। कुछ फ़र्क है तभी तो २००) अधिक है। अतः ७०० वाली ख़रीदो। और इससे भी अच्छी वाली हो तो उसे

खरीदो। रुपयों की चिन्ता मत करो! राय साहब को नाक की चिन्ता है, रुपयों की नहीं।

इसी समय दरबान ने समाचार दिया कि कलक्टर साहब पधारे हैं। राय साहब ऐसे लपके मानो राज्य लेने जा रहे हैं बढ़ कर हाथ मिलाया। लाकर चाँदी वाली कुर्सी पर बिठाया। देखते देखते मिठाई, नमकीन, फल, मेवा के थाल मेज़ पर आ गये। चाँदी की प्यालियों में चाय भी आ गई।

कलक्टर साहब एक मोटे ताज़े आदमी थे। आप कहते थे, मैं ब्राह्मण था पर ईसाइयत को अच्छा समझ ईसाई हो गया। पर आपके आबनूसी शरीर को देख लोगों को शक होता था। क्यों शक होता था? वे ही जाने। पर बहुतों का मत था कि आप ईसाई होने के बाद युरोप गये थे। आती बार काले सागर में गिर पड़े थे।

खा पी कर कलक्टर साहब बोले— राय साहब! सरकार देश की भलाई के लिये अस्पताल खोल रही है। आपको भी इसमें कुछ हाथ बँटाना होगा। मैंने आपके नाम १५०० रु० लिखे थे। फिर काट कर १२०० रु० कर दिये।

राय साहब— आपकी कृपा। १२०० या १५०० एक ही बात है। २००-३०० की क्या हार जीत।

कलक्टर साहब — १५०० रु० ही सही।

राय साहब— नहीं, नहीं साहब, १२०० ही रहने दीजिये।

कल०— नहीं, नहीं, सरकार को आप जैसे वफ़ादार और देश-भक्तों से ही तो आशा है।

राय साहब ने उसी समय ख़जाञ्ची को बुलाया। जिस समय ख़जाञ्ची ने आखिरी पन्द्रहवा नोट कलक्टर साहब के हाथ में दिया उसी समय दर्जन की लड़की ने १२ आने माँ के हाथ में दिये।

माँ ने पूछा— बस इतने ही।

पर लड़की चुपचाप थी। उसके आँसू जवाब दे रहे थे। वहीं खड़ी मालकिन को देख सिसकियाँ भर रही थी।

बेचारी माँ

(१)

आज भी काटहार और नजीबाबाद के बीच 'आफ़रा' स्टेशन पर उतर कर आस पास घूमिये, किले के खण्डहर दिखाई पड़ेंगे। कई हज़ार वर्ष पूर्व यहाँ मोरध्वज राजा राज्य करते थे। उन्हीं का सुदृढ़ गढ़ यहाँ स्थित था। उस समय नगर का नाम 'ध्वजपुर' था। उन्हीं के वंश में एक राजा ज्ञानसिंह हुए। उन्होंने 'ध्वजपुर' का नाम बदल 'ज्ञानपुर' कर दिया। ज्ञानपुर से बिगड़ कर 'ऑंपर', 'ऑंफर' या आफ़रा हो गया। ज्ञानसिंह ने दूर दूर वर्षों में एक क़िला भी बनवाया।

इसी वंश में एक राजा हुए। उनका नाम लक्ष्मीसिंह था। लक्ष्मी तो भरपूर थी पर राजा के बाद उसका भोग करने वाला कोई न था। ईश्वर की सृष्टि में विचित्रता देखी जाती है। धन है तो सन्तति नहीं और सन्तान है तो उसके भरण पोषण के लिये कुछ नहीं। इसी से दार्शनिक कहते हैं, संसार केवल दुःखों और कष्टों का कोष है। राजा बूढ़े हो गये थे।

बड़े यज्ञ किये। दान-पुण्य की सीमा न थी। साधुओं ने पचीसों बार आशीर्वाद दिया। तीर्थों में बहुत माथा घिसा। पर बेकार। पुत्र न हुआ।

अन्त में समस्या ने भीषण रूप धारण कर लिया। राजा अस्वस्थ रहने लगे। एक दिन मन्त्री को बुलाया। राजा बोले— क्या किया जाय, मन्त्रिवर!

मन्त्री चुप था। क्या जवाब दे।

राजा— नाते गोते में भी कोई नहीं दिखाई देता। आपके पसन्द किये लड़के मुझे माननीय नहीं। किसे गोद लूँ? मैं तो उसी लड़के को चाहता हूँ।

मन्त्री बोला— आपकी यही इच्छा है तो आप सब भार मुझ पर छोड़ दीजिये। मैं वही लड़का आपको ला कर दूँगा।

राजा— ठीक है, आप ही उपाय करें।

उसी राज्य में एक गाँव था— कलापुर। वह राज्य की सीमा पर था। उसमें एक वृद्धा दुखिया रहती थी। बड़ी ग़रीब थी। एक दो वर्ष का पुत्र ही उसके प्राणों का आधार था। उसी का किसी न किसी प्रकार भरण पोषण कर अपने दिन काट रही थी। वह सुबह से शाम तक घोर परिश्रम करती। दूसरों के यहाँ चाकरी करती, खेतों में मेहनत करती।

इससे खाद् डालने को कहो वह सिर पर ढो कर ले आयेगी। इससे दीवालों पर गोबर फिरवाओ- दिन भर सीढ़ी पर टंगी रहेगी। यह सब इस लिये करती कि उसके पति की निशानी बनी रहे, उसके लाल को कोई दुख न हो।

आज सुखिया बड़ी प्रसन्न थी। उसने ५ सेर आटा पीस लिया था। आटा लेकर वह गाँव के बनिये के घर की ओर चल दी। पैर अपने आप जल्दी बढ़ रहे थे। प्रसन्नता मनुष्य को बल देती है और दुख अशक्तता। सिर पर टुकड़ी थी। उसे मालूम ही न होता था कि सिर पर बोझ है। वह सोच रही थी- वह कोट कैसा अच्छा है! जरी का काम है। सूरज की रोशनी में चमक उठता है। सेठानी ने राम को पहिनाया। रामू भी तो मेरे धौला ही की उमर का है। पर रामू ठहरा सेठ का। वह पहिन कर धूप में खेल रहा था। कोट चमक रहा था। आंखें चौंधिया जाती थीं। मैंने पूछा- सेठानी जी, यह कोट कितने का है?

सेठानी जी हंसने लगीं और बोलीं- क्यों सुखिया! पसन्द आ गया क्या! मैंने कहा- हां, अपने धौला के लिये भी बनवाती पर……, मैं आगे न बोली।

सेठानी ने ठहाका मार कहा- अरी पगली, नथिया भंगन रेशम का लहंगा।

मुझे बड़ा बुरा लगा। मैं मन में कहने लगी- केवल गरीब होने से। हम भी अपने बच्चों को अच्छा खिलाना पिलाना चाहती हैं, अच्छा पहिराना चाहती हैं। हमारे भी मन है। बस, पूछने पर ही इतनी हंसी। मैं गुस्से को दबा कर बोली- बतलाओ तो, बतलाने में क्या हरज है? सैन चला कर हाथ की चार उंगली खड़ी कर वे बोली- ले सुन, पूरे चार रुपये का। मंगायेगी।

क्या बोलती। पर मन में इरादा किया- अधिक मजूरी करूंगी। कोट लूंगी।

तब से सेठानी जी पर मजूरी के पैसे जमा करती रही। आज साल भर बीत गया है। कल ४ रु० में पांच पैसे कम थे। सेठानी जी ने जब ५ सेर गेहूँ तोल कर दिये थे तो मैंने कह दिया था- सेठानी जी कल पूरे ४ रु० हो जायेंगे। कोट मंगवा लीजियेगा। जब सुबह आटा लाऊंगी तो कोट लेती जाऊंगी।

कोट उन्होंने मंगवा लिया होगा। आज दशहरा है। धीसा को कोट पहिना भगवान से प्रार्थना करूंगी- मेरे धीसा को आयु दो, इसे सुख दो।

(२)

कोट बगल में दबा सुखिया वापिस लौटी । झोंपड़ी के पास आई। वह आश्चर्य में पड़ गई । सूर्य उदय होने वाला था। प्रकाश भी काफी था। प्रकाश में उसने देखा, ताला पास पड़ा है। वह भूल तो नहीं गई थी ! नहीं उसे याद है उसने ताला लगाया था । उसका माथा ठनका । कोई चोर उस गरीब के बरतन भाण्डे तो नहीं उठा ले गया।

वह जल्दी से घर के अन्दर गई । देखा भाला। कुछ न गया था। वह दालान में गई। घीसा को देखा। पर उसे खाट पर न देखा । वह तो उसे खाट पर सोता छोड़ गई थी। इधर उधर देखा । आवाज लगाई । मकान से बाहर आ आवाजें दी " घीसा, ओ घीसा !" पर जवाब न आया। वह जा कहाँ सकता था? आस पास कोई मकान न था। सुखिया का पति साल भर हुआ इस संसार में उसे अकेली छोड़ चला गया था। उसका मकान खेत ही में था। मकान से थोड़ी दूर पर बस एक झोंपड़ी थी । सुखिया वहाँ दौड़ी गई । आज उसमें न जाने कहाँ से बल आगया था। एक ही दौड़ में पहुँच गई। जाते ही पुकारा- छिदमी, छिदमी ।

छिदमी ने दरवाजा खोला । उसके वृत्त पृथ्वी माता का

आश्रय ढूंढ चुके थे। सुखिया ने हाँपते हाँपते कहा— मेरा घसीटा है।

छिदमी— अन्दर आ। एक बात बताऊँगी।

सुखिया अन्दर पहुँची। छिदमी ने कान में कुछ कहा।

सुखिया का मकान लुट जाता तो इतनी ठेस न पहुंचती वह पागल सी होगई। "मेरा घसीटा, मेरा घसीटा" कह चिल्लाती वह खेतों में से हो दौड़ी। एक जगह गिर पड़ी। फिर उठ कर दौड़ी। जोर से चिल्ला रही थी— हाय रे मेरा घसीटा!

(३)

सूर्य चारों ओर स्वर्ण बखेर रहा था। मनुष्य ठोस सोने के पीछे लट्टू है। किसी ने भी इस फैले हुए सोने की ओर न ताका। सुखिया तो दुखिया थी। वह क्यों सोने या चाँदी का ख़याल करती? उसके बाल बिखरे हुयेथे। कपड़ों की चिन्ता न थी। वह सीधी बताई हुई हवेली पर पहुँची। पहरेदारों ने पकड़ लिया। वह रोती गोद फैला कर बोली— मेरा घसीटा मुझे दे दो।

एक पहरेदार ने कहा— पगली है, कोई पगली। भगा दो। इसी समय मन्त्रीजी दरवाजे में दिखाई दिये। वे बोले— आने

दो इसे। सामने आते ही वह गिड़गिड़ा कर बोली— मैं पैरों पड़ती हूँ। मेरा घसीटा, मुझे दे दो। वह कहाँ है ?

मन्त्री— बुढ़िया घबड़ा मत। तेरा बच्चा कुशल से है। एक बात बता, तू उसे आराम से देखना चाहती है, आराम देना चाहती है।

सुखिया— हाँ।

मन्त्री— बस तो हमने उसे सुख से रखने का प्रबन्ध कर लिया है। वह बड़े आराम से रहेगा। खूब खुश रहेगा। वह राजा बनेगा राजा। तुझे भी १०० दीनार प्रति मास मिलेंगे। राजी है न ?

सुखिया-- मैं कुछ नहीं समझी। मेरा घसीटा मुझे दे दो।

मन्त्री— अरी बावली! ले समझ। तेरे घसीटा के भाग जाग गये हैं। महाराज उसे गोद लेंगे।

सुखिया-- महाराज के राज्य में यह जुल्म! आपको याद है मैंने पहिले ही मना कर दिया था।

मन्त्रीजी-- तभी तो यह सब करना पड़ा। नहीं तो तेरे पीछे उठवा मंगाने की नौबत ही क्यों आती। महाराज को यही लड़का पसन्द आया। और भी कई दिखाये। पर न जाने

क्या बात है उन्होंने कहा, गोद लूँगा तो इसे ही लूँगा । राज ज्योतिषी ने इसी में राजा के सब लक्षण बताये । महाराज से ज्योतिषियों ने कहा- यह लड़का बड़ा भाग्यशाली है । इसकी सन्तति भी बहुत बढ़ेगी । महाराज के भी दिल में जम गई । तुझे बहुतेरा समझाया । तू मानी नहीं । अब इसी में भलाई है कि सुख से महाराज के यहाँ रह । १०० दीनार महीने के ऊपर से मिलेंगे ।

सुखिया— गोद जाकर वह अपने पिता का न रहेगा । मेरा तो न कहलायेगा । ना ना, मैं नहीं मानती । मेरा घसीटा मुझे दे दो । मुझे रुपये रुपये कुछ नहीं चाहिये ।

मन्त्री-- अरी मूर्खा, भगवान को धन्यवाद दे । वह राजा होगा । तू भी आराम से रहेगी ।

सुखिया— तुम्हारे कै लड़के हैं ?

मन्त्री-- एक ।

सुखिया— अच्छा, तो हाथ जोड़ती हूँ । आप उसे राजा को दे दें । तुम आराम से रहना । वह राजा बन जायेगा । मैं मुसीबत ही सह लूँगी । मेरा घसीटा मुझे दे दो ।

मन्त्री— कोई है !

पहरेदार ने आ सलाम बजाया।

मन्त्री— यह बुढ़िया तो आफ़त की पुड़िया है। इसे बाहर रक्खा तो दुनिया में हमारा ढिंढोरा पीटती फिरेगी। इसे उसी पहाड़ वाले क़िले में ले जाओ। वहाँ कोई नहीं रहता। देखना, इसे किसी प्रकार की तकलीफ़ न हो। दो विश्वासी नौकर वहाँ रख देना।

(४)

कल युवराज का अभिषेक होगा। मृत महाराज का यही दत्तक पुत्र है। नगर की सजावट देख इन्द्रपुरी लज्जा के मारे सिर नीचा कर रो रही है। कल ही पुराने मन्त्री अपने पद से विश्राम लेंगे। उन्होंने राज्य की अनेक सेवाएँ की हैं। वे अपनी इच्छा से इस पद से हाथ खींच रहे हैं। तो भी वे रंजीदा हैं— — आज के दिन यदि मेरा पुत्र जीवित होता तो कल वही मन्त्री बनता। वह युवराज की उमर का था। मैंने बुरा किया, उसका फल पाया। संसार का नियम ठीक ही जान पड़ता है कि जो जैसा करता है वैसा ही फल पाता है। मैंने दुखिया का धीसू छीना, मेरा भगवान ने छीन लिया। मन्त्री की आँखों में आँसू भर आये। इसी समय पहरेदार ने आकर सलाम बजा कहा— हज़ूर, जेल-दारोगा पधारे हैं।

मन्त्री— आने दो।

दरोगा जी अभिवादन कर बोले— श्रीमान्, आपकी आज्ञानुसार सब कैदी छोड़ दिये गये हैं। जेलें खाली पड़ी हैं। कोई कैदी नहीं।

मन्त्री जी को कुछ याद आ गया। उनकी आँखों के सामने पहाड़ों के बीच के किले का चित्र खिंच गया। उसमें ही सुखिया है। रोते रोते ही दिन काटती है। एक छोटे से कोट को गोड़े पर रख दिन-रात उससे बातें करती है। सेठानी जी, मेरा क्या चाहिये है। धीसू दूध पीले रे। अरे मान जा, बड़ा हठी बालक है। अहा! कैसा चाँद सा सुन्दर है मेरा धीसू। नज़र न लग जाय...... । सूख कर पिंजर हो गई है।

दीवान जी सोच रहे थे— रोजाना यही खबरें आतीं। आज बलपूर्वक खाना खिलाया। आज उसने अपनी मर्ज़ी से खूब खाया। आज वह दिन भर एक ही जगह बैठी रोती रही। आज वह मन्त्री जी को गाली देती रही। आज वह शान्त है। आज दिन भर हँसती रही।

दरोगाजी ने देखा कि मंत्रीजी किन्हीं विचारों में पड़ गये। चुप हैं। उन्हें यह परिस्थिति बहुत अखरी। मन में भय करने लगे कि कहीं अप्रसन्न तो नहीं हो गये। पर कोई

कारण प्रसन्नता का न मिला । दरोगाजी जाने के लिये उठे, हाथ जोड़ बोले– तो आज्ञा हो श्रीमान् !

दीवानजी चौंक पड़े। अकपकाकर बोले–हां, दरोगाजी, तो कोई कैदी बाकी नहीं, न पुरुष न स्त्री ।

दरोगा– जी श्रीमान् ।

मंत्री– तो अच्छा जाईये । अभिषेक के सम्बन्ध में तय्यारियां कीजिये ।

दरोगाजी के जाते ही मंत्रीजी ने पहरेदार को बुला कर कहा– मैं अभी उस पहाड़ वाले किले में पहुँचना चाहता हूं।

मंत्रीजी किले में पहुंचे । सुखिया की दशा देख दिल कांप गया । वे उस के पास जाकर बोले– सुखिया ! आज खूब खुशी मना । तेरा पुत्र कल राजा बन जायेगा । तू भी उस उत्सव को देख दिल ठन्डा करना। मैं तुझे छोड़ने आया हूं।

(५)

मन्त्रों से पवित्र किया हुआ जल छिड़कने के बाद राज पुरोहित ने तिलक किया। नये मन्त्री भी आज ही शपथ लेंगे। राज सभा में सन्नाटा है। बूढ़े मंत्रीजी अपना कार्य संभलाने से पूर्व भाषण देने खड़े हुए। वे बोले—

श्री नृप शिरोमणि राज राजेश्वर तथा दर्बारीगण ! आज कितनी प्रसन्नता का दिन है। जिस दिन को हम चातक की भांति······। इसी समय बाहर बड़ा कोलाहल हुआ। मंत्रीजी को आज्ञा हुई— कोतवाल साहब ! बाहर जाकर देखिये। क्या बात है ? कोई फ़र्यादी हो तो ले आना।

कोतवाल साहब बाहर गये। वे वापिस आकर बोले— महाप्रभू ! कोई नहीं। एक पागल बुढ़िया है। अन्दर आने के लिये ज़ोर मार रही है। सिपाहियों ने रोक लिया है।

मन्त्रीजी फ़ौरन समझ गये। मन में कहा– क्या हानि है। देख लेने दो। फिर कोतवाल साहब से बोले– आने दो। आज राज दर्बार सब के लिये खुला है।

पगली आई। हड्डियों का ढांचा था। दम फूल रहा था। आते ही बोली– कहां है मेरा वीरू। कोई बताओ ना। वह आज राजा बनेगा।

सब आश्चर्य में थे। बुढ़िया की ओर एकटक निहार रहे थे। वह घूर घूर सब की ओर देख रही थी।

महाराज बोले– मंत्रीजी। यह कौन है ?

पर बूढ़े मंत्री वहां न थे। अंगरक्षक ने उत्तर दिया— मंत्री जी की तबियत खराब होगई थी। वे बाहर चले गये हैं।

बुढ़िया की आँखें सिंहासन और उस पर बैठे किशोर महाराज पर जम गईं।

वह कुछ सोच रही थी। पहिचान रही थी। उसका हृदय उमड़ा। वह प्रसन्न होकर चिल्लाई– मेरा मसीटा ! देख, तेरा यह कोट लाई हूँ। चल मेरे साथ।

सिंहासन पर आ उसने महाराज का हाथ पकड़ खींचा। महाराज घबरा गये। हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगे। पगली और ज़ोरों से कसने लगी। वह बोली— बेटा ! घर चल। ये लोग तुझे यहां कहां लाये हैं। तू तो मेरा बेटा है।

ऐसा कह वह दोनों हाथ फैला महाराज की ओर बढ़ी।

महाराज ने धक्का दिया। वह गिर पड़ी। महाराज कड़क कर बोले— निकालो।

अब तक सब बुत बने खड़े थे। किसी को सुध न थी। सब एक स्वप्न सा देख रहे थे। महाराज की आज्ञा सुनी तो होश आया। सिपाही पकड़ कर ले चले। वह रोते रोते बोली– मेरा बेटा भी मुझ से बदल गया।

महाराज ने फिर पूछा— मन्त्रीजी आये।

उत्तर मिला— नहीं।

सभा यहीं समाप्त हो गई । महाराज व्याकुल चित्त राजभवन की ओर चल दिये । सोच रहे थे– मन्त्रीजी क्यों गायब हुए ? बुढ़िया मुझे बेटा क्यों कहती थी ?

(६)

अपने कमरे में पहुँचते ही उन्होंने बूढ़े मन्त्री को बुलावा भेजा । उन्हें मन्त्री पर क्रोध आ रहा था । उत्तर में नौकर ने आकर सूचना दी— अन्नदाता ! मन्त्रीजी घर पर न थे । एक पत्र वे अपने एक नौकर को दे गये हैं । यह कह गये हैं कि कोई महाराज के यहाँ से पूछने आवे तो वह पत्र दे देना ।

महाराज ने आतुरता से पत्र पढ़ा । उसमें लिखा था—

श्री महाराज राजेश्वर !

अब मेरी आप से कभी भेंट न होगी । मैं काशी जा रहा हूँ । पर जाने के पहिले रहस्य का उद्घाटन कर हृदय हलका करना चाहता हूँ । आज से १५ वर्ष पूर्व आप उसी पगली बुढ़िया के "घसीटा" थे । उसी नाम से आज वह आपको बुला रही थी ।

इस पत्र में उन्होंने वह सब घटना वर्णन कर दी थी कि किस प्रकार वृद्धा सुखिया का इकलौता पुत्र उठवा मंगाया था।

पत्र को एक ओर फेंक महाराज बदहवास दौड़े । राज-भवन में तहलका मच गया ।

उन्होंने नौकरों से कहा— जाओ उसी बुढ़िया को ढूंढो जो दर्बार में आई थी ।

चारों ओर घुड़ सवार दौड़ पड़े। थोड़ी ही देर में बुढ़िया राजभवन में लाई गई । उसके खून निकल रहा था। गिर पड़ी थी। उसे देखते ही महाराज उसके चरणों में लोट बोले— माँ, मुझे क्षमा करना। मुझे पता न था कि तुम मेरी माँ हो ।

महाराज का गला रुंध गया । बुढ़िया खुशी की बाढ़ में बेसुध-सी होगई थी । अपने होश में आते ही महाराज को छाती से लगाया और कहा— मेरा घसीटा । वह और प्रसन्नता का भार न वहन कर सकी । पीछे गिर पड़ी । उसी समय राजवैद्य वहाँ आगये ।

मित्र

(१)

लड़के उन्हें 'दो शरीर एक आत्मा' कह चिढ़ाते। थे भी दोनों ऐसे ही। कुमार किशोर के बगैर न रहता, न किशोर कुमार के। जहाँ देखो दोनों वर्तमान। छात्रालय के क्रीड़ा-क्षेत्र, रसोईघर, सिनेमा में— दोनों साथ साथ।

बी० ए० की परीक्षा समाप्त हुई। विद्यार्थी छात्रालय को धर्मशाला के यात्रियों की भाँति छोड़ने लगे। पर इनके भाव यात्रियों से सर्वथा भिन्न थे। छात्रालय और मित्रों को छोड़ते दिल पर बुरी बीत रही थी। किशोर के पिता ने शीघ्र आने को लिखा था। बहिन व माताजी को ले नैनीताल जाना होगा। उसकी माता का स्वास्थ्य दिन ब दिन गिर रहा था।

बिस्तर बंधा। दोनों स्टेशन पहुँचे। हृदय रो रहे थे। बहुत कुछ कहना था पर मुँह न खुलता था। किशोर ने अपना पता लिख कुमार को दे दिया। गाड़ी आ गई। अब न रुक सके। अश्रुधारा टूट पड़ी। किशोर ने कुमार को कौली में

[चौथी कक्षा]

मित्र

मित्र

(१)

लड़के उन्हें 'दो शरीर एक आत्मा' कह चिढ़ाते। थे भी दोनों ऐसे ही। कुमार किशोर के बगैर न रहता, न किशोर कुमार के। जहाँ देखो दोनों वर्तमान। छात्रालय के क्रीड़ा-क्षेत्र, रसोईघर, सिनेमा में-- दोनों साथ साथ।

बी० ए० की परीक्षा समाप्त हुई। विद्यार्थी छात्रालय को धर्मशाला के यात्रियों की भाँति छोड़ने लगे। पर इनके भाव यात्रियों से सर्वथा भिन्न थे। छात्रालय और मित्रों को छोड़ते दिल पर बुरी बीत रही थी। किशोर के पिता ने शीघ्र आने को लिखा था। बहिन व माता जी को ले नैनीताल जाना होगा। उसकी माता का स्वास्थ्य दिन व दिन गिर रहा था।

बिस्तरा बंधा। दोनों स्टेशन पहुँचे। हृदय रो रहे थे। बहुत कुछ कहना था पर मुँह न खुलता था। किशोर ने अपना पता लिख कुमार को दे दिया। गाड़ी आ गई। अब न रुक सके। अश्रुधारा टूट पड़ी। किशोर ने कुमार को कौली में

भर लिया। कुमार ! तुम मेरे लिये भाई से अधिक हो। यदि एम० ए० के लिये आया तो तुम्हें लिख दूँगा। ज़रूर चले आना। खर्चें की चिन्ता न करना। जैसे अब तक चला है, आगे भी चलेगा। गाड़ी ने सीटी दी। दोनों रो रहे थे।

(२)

रेलवे सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब सब प्रार्थना-पत्रों को देख रहे थे। मन में गुनगुना भी रहे थे 'बुरा हाल है पढ़े लिखों का। एक छोटी सी जगह के लिये सैकड़ों प्रार्थी। एक अनार सौ बीमार। यही ३० की जगह है। ३०० से अधिक प्रार्थना पत्र।' इसी समय एक बी० ए० साहब का प्रार्थना पत्र हाथ में आया। नाम था शारदाचरण। सोचने लगे 'इतनी अधोगति ! ४०–५० तो कालेज में प्रति मास खर्च करते होंगे, आज ३०) पर टूट रहे हैं।' एक साँस निकली।

कुछ देर बाद एक और बी० ए० पास का प्रार्थना-पत्र हाथ में आया। नाम था निरञ्जन कुमार। टाइप किया हुआ था। लिखा था— मेरी इस बुरी अवस्था पर तरस खा कर यदि यह पद दे दें तो बड़ी कृपा हो। एक स्त्री, एक लड़का और एक मैं– तीन प्राणियों को जीवन दान देने का पुण्य प्राप्त हो। कोई सिफारिश नहीं। कोई सहायक नहीं। लड़का बीमार…

इसी समय चपरासी ने कार्ड सामने ला कर रक्खा।

'राय बहादुर पं० कृष्णप्रसाद जी वाजपेयी, एम० ए०,
बार० एट० ला०, जज, मुरादाबाद।

फौरन आज्ञा हुई, बुला लाओ। बड़े तपाक से हाथ मिलाया गया। इधर उधर की बातें होती रहीं।

जज साहब बोले— बड़े व्यस्त मालूम होते हो?

सुपरि०— जी हाँ, राय बहादुर साहब, प्रार्थना-पत्रों को देख भाल कर रहा हूँ।

जज— यह काम तो क्लर्क ही कर देता। क्यों जान को बवाल में डाला?

सुपरि०— आपका कहना बिलकुल उचित है, पर मैंने यही उचित समझा।

जज— आप बड़ा परिश्रम करते हैं। बड़ा ढेर सा लग रहा है। न मालूम लोग क्यों इतना रेलवे के पीछे हाथ धो कर पड़े हैं।

सुपरि०— राय बहादुर साहब, सभी महकमों की यह हालत है। बेकारी की बड़ी भीषण समस्या है। यह भी जीवन है कि पेट भर खाने को न मिले। यह हाल बेकारी का

है कि तीन बी० ए० पासों ने इस ३०) की जगह के लिये प्रार्थना पत्र भेजे हैं। पढ़े लिखों की यह दुर्दशा है। मिट्टी ढोने वाला मजदूर कठिनता से मिलता है पर पढ़ा लिखा गली गली।

जज— तो क्यों नहीं ये दूसरे कामों पर लगते? नौकरी में ही क्या लाल लगे हैं?

सुपरि०— यह इस शिक्षा का प्रभाव है। बालकों के कोमल दिमाग में नौकरी ही सर्व श्रेष्ठ वस्तु बैठाई जाती है। पुस्तक अध्ययन के सिवा और शिक्षा रक्खी कहाँ? न व्यापार, न कारीगरी।

जज— आप बिलकुल ठीक कहते हैं। अच्छा तो आपने क्या निश्चय किया है?

सुपरि०— एक बी० ए० पास साहब ने दिल पिघलाने वाली बातें लिखी हैं। पढ़ कर बड़ा दुःख होता है। सोचता हूं फिलहाल तो उसे यह जगह दे दूँ। आगे समय आयगा तो तरक्की कर दूँगा। कोई और अच्छी जगह दिलवा दूँगा।

जज— आपने बहुत उचित विचार किया है। केवल एक बात है। बी० ए० को ३०) पर नौकर रखना विद्या का अपमान करना है। आप भी बी० ए० हैं। आप १२०० रु० पाते हैं। उस बी० ए० को ३०)। फिर एक और भी विचार उत्पन्न

होता है। वह इस स्थान पर उचित रूप से काम भी न कर सकेगा। वह इस स्थान पर कार्य करता हुआ प्रत्येक क्षण अपना अपमान ध्यान में रक्खेगा। उसे अपने पास छोटे पढ़े लिखे मनुष्य दिखाई देंगे। मिडिल पास ४० रु० पाता मिलेगा। तो वह अपने ऊपर हाहाकार करेगा। मन से काम न कर सकेगा। तीसरे बी० ए० पास वालों का ढेर तो आपने लिया ही नहीं। न जाने ऐसे कितने पड़े हैं?

सुपरि०— आप ठीक कहते हैं। पर उस बेचारे की स्थिति………।

बीच ही में काट कर जज साहब बोले— मैं बताऊँ आप को एक आदमी। उसका प्रार्थना-पत्र आपके पास इसी समूह में होगा। उसका नाम है 'कमलाकान्त वाजपेयी।' मैट्रिक फ़ेल है। मैं उसे जानता हूँ। मेरे ख़याल में आप उसे ही रक्खें। अपना ही आदमी है। बड़ा होशियार। मैं उसी की सिफ़ारिश करता हूँ।

सुपरि०— किसी न किसी को तो रखना ही है। आपकी सिफ़ारिश को टाल भी कैसे सकता हूँ।

पर मन ही मन वे सोच रहे थे। 'वह बेचारा! कैसा दुखी

है। हम साँसारिक बन्धनों में ऐसे जकड़ गये हैं कि न्याय के मार्ग पर खड़े होने का साहस नहीं। मेरा मित्र भी इसी नाम का था। सुना था वह कहीं किसी स्कूल में शिक्षक हो गया है। उसके नाम के ही नाते से रख सकता। किन्तु जज साहब से सैकड़ों काम पड़ते रहते हैं।

(२)

जज— तुम्हारा कोई वकील नहीं ?

अपराधी— बिना पैसे लिये कौन वकालत करता है। दुनिया अमीरों की सहायक है, ग़रीबों की नहीं। फिर मैं छूटना भी तो नहीं चाहता। मैं अपराधी हूँ। सब ग़रीब अपराधी हैं। भूखा क्या पाप नहीं करता ?

जज— तुमने इतनी उच्च शिक्षा प्राप्त की तो भी ऐसा बुरा काम करने पर उतारू हो गये ?

अपराधी— क्या करता ? पेट की आग ने विवश कर दिया।

जज— तो कोई गवाह भी नहीं ? सरकारी वकील ने जो कहा, सब ठीक है। ख़ैर, तो भी एक बार और समय देता हूँ। यदि कोई सफ़ाई देना चाहो तो अगली पेशी पर देना।

पुलिस के आदमियों ने अपराधी को मोटर में बैठाया और हवालात की ओर ले चले। लोग अपराधी के लिये दुख प्रकट कर रहे थे। 'इतना पढ़ा लिखा। यह हालत! भाग्य की गति को कोई नहीं जानता' एक कह रहा था। दूसरा बोला— बड़ा बदमाश है। भोला बनता है।

चौराहे पर बड़ी भीड़ थी। रेलवे सुपरिन्टेन्डेंट अपनी मोटर में बैठे सिनेमा जा रहे थे। वे अपनी स्त्री से कह रहे थे— ५ साल बीत गये हैं। न जाने वह कहाँ है। अलग होने के बाद कुमार के दो तीन पत्र आये। मैं जवाब न दे सका। फिर मैंने दो पत्र भेजे, आज तक जवाब न आये। बड़ा अच्छा मित्र था। कहा करता था— अब भाभी साहबा आयेंगी तो मैं उन से कहूँगा, भाई साहब, रुपया बहुत लुटाते हैं। इनको ठीक करो। एक दिन की बात है—

सुपरिन्टेन्डेंट साहब बात कहने में कुछ ऐसे लीन हुए कि चौराहे का ध्यान भी न रहा। चौराहे के सिपाही का हाथ भी न देखा। मोटर खड़ी न की। अचानक सीटी बजी। सामने पुलिस वालों की मोटर थी। बस लड़ने से बाल बाल बच गई। सामने की मोटर में देखने लगे। देखने पर अपने दिमाग़ को जोर देने लगे। याद करने की कोशिश की। इसी समय चौराहे

का एक सिपाही दोनों मोटरों को एक तरफ ले गया। सुपरिंटेन्डेंट साहब से बोला— लाइसेंस और नम्बर।

सुपरिन्टेन्डेंट साहब ने लाइसेंस दे कह दिया नम्बर मोटर पर है। शान जताने के लिये सुपरिन्टेन्डेंट पुलिस लारी के ड्राइवर को डांटते बोले— सीखता नहीं। इस तरह मोटर चलाता है?

एक नौजवान सा नया सिपाही कड़क कर बोला—उलटा चोर कोतवाल को डांटे। अब आटे दाल का भाव मालूम हो जायेगा। चले हैं साहब धमकाने। कसूर आपका है, कि हमारा?

इनमें एक बूढ़ा सिपाही सुपरिन्टेन्डेंट साहब को पहचानता था। फौरन उतर कर सलाम कर बोला— हजूर खता माफ हो।

सुपरिंटेन्डेंट फौरन नम्र हो बोले—कौन है रे यह भीखा?

भीखा— हजूर, बड़ा खराब जमाना आगया है। जब पढ़े लिखों का यह हाल है तो अनपढ़ों को क्या दोष दिया जाय। ये हैं बी० ए० पास। शर्म भी न आई। चोरी की। भले मानुष भीख माँग कर ही पेट पाल लेता। सोचा था खूब माल हाथ

लगेगा। चोरी करने में भी बड़े दम की जरूरत है। यह भी मामूली काम नहीं।

सुप०— कितनी कैद हुई ?

मोखा— अगली पेशी पर हो जायेगी। वकील नहीं, गवाह नहीं, बचेगा कैसा। आज कल का इन्साफ तो इन्हीं दो ठेकों पर टिका है।

(४)

आज मशहूर मुकदमे की पेशी का आखिरी दिन है। पर इस पेशी ने सबको चकित कर दिया। देश के सब से प्रसिद्ध वकील रायसाहब बा० रमानाथ गुप्त, बैरिस्टर अपराधी की ओर से वकालत कर रहे थे। अपराधी स्वयं चकित था। ४ गवाह भी उसके पक्ष में गवाही दे चुके थे। वह बोलना चाहता था पर कोई बोलने न देता था। मन्त्र मुग्ध की नाईं सब कार्रवाही देख रहा था।

बहस ख़तम हुई। जज साहब पं. कृष्णप्रसादजी वाजपेयी ने फैसला सुना दिया। अपराधी को निर्दोषी स्वीकार कर साफ छोड़ दिया।

अपराधी बड़ा दुखी था। जेलमें पेट तो भर जाता। अब भूखों प्राण गंवाने पड़ेंगे। संध्या होचुकी थी। पानी जोर से पड़ रहा था

वह रामगंगा की ओर चल दिया। किनारा थोड़ी दूर था। अचानक पीछे से कई दृढ़ हाथों ने पकड़ लिया। वह चिल्ला उठा। पर उसका मुँह बन्द कर दिया गया। मन में सोचने लगा—पीछे पड़ी पुलिस कहीं छोड़ सकती है? आराम से मरने भी नहीं देती। उसका सिर घूम रहा था। उसे जबरदस्ती उठा कर ले जाया गया। उसे मालूम हुआ कि एक मुलायम पलंग पर डाल दिया। इसी समय किसी ने आवाज दी—बाबू! स्नान कर लो।

उसने आँखें खोलीं। हैरान था। एक आलीशान कमरे में पड़ा था। नौकर हाथ में धोती, साबुन, तेल लिये पुकार रहा था। वह कुछ भी न समझ सका। सुपना भी न था। उठा। हजामत बनी। स्नान किया। कपड़े बदले। नौकर ने खाना मेज पर लाकर लगा दिया। सारे जीवन में कभी ऐसा खाना न खाया था। फिर इधर बहुत दिनों से पूरी-शाक देखा भी न था। भुक्खड़ की नाईं टूट पड़ा। जल्दी जल्दी हाथ चला रहा था। हंसने की आवाज सुनी। खाना रोक दिया। पीछे मुड़ कर देखा। वे ही वकील साहब थे जिन्होंने बचाया था।

वे बोले—हमारा इन्तजार भी न किया। खैर, पर वह

क्या इसी लिए इतने कष्ट दिये । भगवान ने भला किया कि समय पर हमें सूचना मिल गई । आपका यह एक पत्र है ।

आश्चर्य में पड़ वह बोला— पत्र   मेरा पत्र !

उसने लिफाफा खोला । उसमें एक नियुक्ति पत्र था । १००) मासिक पर । अगले दिन ११ बजे रेलवे सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब ने मिलने बुलाया था ।

विश्वास न हुआ । वकील साहब से पूछा— यह कैसी मजाक !

वकील साहब— मुझे कुछ पता नहीं । थोड़ी देर हुई रेलवे का चपरासी दे गया है । आप परदेश मे हैं । आपकी सहायता करना मेरा धर्म है । अभी दरजी आता होगा । आप उसे नाप दे दें । वह ठीक कल ६ बजे सूट सिल कर दे जायेगा ।

११ बजे सूट पहिन दफ्तर गया । चपरासी अन्दर ले गया । सुपरिन्टेन्डैन्ट साहब उसकी ओर से पीठ किये कुर्सी पर बैठे थे । देवी देवताओं को मनाता उनकी कुर्सी के पास गया । सुपरिन्टेन्डैन्ट साहब एक दम उठे और उन्होंने मिलने के लिये हाथ फैलाये । वह डर कर पीछे हट गया । उसी समय

सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब ने हृदय से लगाते हुए कहा— कुमार ! बहुत दिन बाद मिले।

बैठते हुए कुमार बोले—दद्दा ! यह सब कारस्तानी तुम्हारी है किशोर !

किशोर— तुम्हें सिपाहियों की मोटर में देख पहचान गया था पर तुम न पहिचान सके।